रोज़गार सृजन के अभाव से जूझ रहा है ग्रामीण भारत

रोज़गार सृजन के अभाव से जूझ रहा है ग्रामीण भारत

भारत का श्रमिक-जनसंख्या अनुपात (सभी उम्रों के लिए) 2017-18 में 47 प्रतिशत से बढ़कर 2023-24 में 58 प्रतिशत हो गया। इस दौरान कुल कार्यबल का आकार 45 करोड़ से बढ़कर करीब 60 करोड़ हुआ है। इस अवधि में 15 वर्ष या उससे अधिक उम्र के लोगों की बेरोज़गारी की दर भी **घटकर** 6 प्रतिशत से 3.2 आ गई है। विश्व की सबसे तेज दर से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में शुमार देश के लिए बढ़ती जीडीपी के साथ-साथ बढ़ती नवसृजित रोज़गारों की संख्या आर्थिक बेहतरी के संकेत होने चाहिए। तमाम सरकारी **दस्तावेज़ों** तथा नवउदारवादी अर्थशास्त्रियों के अध्ययनों में इसे अर्थव्यवस्था के रोज़गारपरक विकास के साक्ष्य के रूप में पेश किया जाता है। हालाँकि, सांख्यिकी और कार्यान्वयन मंत्रालय द्वारा किए जाने वाले आवधिक श्रमबल सर्वेक्षण के आँकड़ों का सूक्ष्म विश्लेषण इन दावों के पीछे दबी सच्चाई को उजागर करता है।

तालिका: अखिल भारतीय श्रमिक-जनसंख्या अनुपात (15 वर्ष और उससे ज्यादा उम्र के लोगों के लिए सामान्य स्थिति (पीएस+एसएस) में)

वर्ष	महिला			पुरुष			व्यक्ति		
	ग्रामीण	शहरी	शहरी+ग्रामीण	ग्रामीण	शहरी	शहरी+ग्रामीण	ग्रामीण	शहरी	शहरी+ग्रामीण
2017-18	23.7	18.2	22	72	69.3	71.2	48.1	43.9	46.8
2018-19	25.5	18.4	23.3	72.2	68.6	71	48.9	43.9	47.3
2019-20	32.2	21.3	28.7	74.4	69.9	73	53.3	45.8	50.9
2020-21	35.8	21.2	31.4	75.1	70	73.6	55.5	45.8	52.6
2021-22	35.8	21.9	31.7	75.3	70.4	73.8	55.6	46.6	52.9
2022-23	40.7	23.5	35.9	78	71	76	59.4	47.7	56
2023-24	46.5	26	40.3	78.1	72.3	76.3	62.1	49.4	58.2

आँकड़ों का स्त्रोत : वार्षिक आवधिक श्रमबल सर्वेक्षण (पीएलफ़एस), सांख्यिकी और कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार।

बढ़ते श्रमिक-जनसंख्या अनुपात की विडंबना

भारत का श्रमिक-जनसंख्या अनुपात (15 वर्ष अथवा उससे अधिक उम्र के लोगों के लिए) 2017-18 में 46.8 था, जो 2023-24 में 58.2 हो गया। यह बढ़ोत्तरी मुख्यत: ग्रामीण महिलाओं के बढ़ते श्रमिक-जनसंख्या अनुपात की वजह से संभव हो पाई। जहाँ ग्रामीण महिलाओं का श्रमिक-जनसंख्या अनुपात 2017-18 में 23.7 था, वहीं वो 2023-24 में लगभग दोगुना होकर 46.5 हो गया। ग्रामीण पुरुषों का श्रमिक-जनसंख्या अनुपात सिर्फ 5 अंक बढ़ा। शहरी महिलाओं तथा पुरुषों का श्रमिक-जनसंख्या अनुपात भी मामूली ही बढ़ा।

2017-18 और 2023-24 के दौरान हुए श्रमिकों की कुल संख्या में वृद्धि में अकेले ग्रामीण महिला श्रमिकों की बढ़ती

संख्या का योगदान तकरीबन 52 प्रतिशत था। भारत में पुरुष श्रमिकों की तुलना में महिला श्रमिकों की संख्या काफ़ी कम है। इस परिप्रेक्ष्य में महिला श्रमिकों की बढ़ती संख्या आशाजनक बात होनी चाहिए। विशेषकर तब, जब महिलाएँ पहले से ही कम उत्पादकता की शिकार कृषि से निकलकर गैर-कृषि सेक्टरों में काम करने जाएँ।

हालाँकि ऐसा हो नहीं रहा है। आँकड़े बताते हैं कि 2017-18 में जहाँ 73 प्रतिशत ग्रामीण महिला श्रमिक कृषि कार्यों में संलग्न थीं, वहीं 2023-24 में उनकी संख्या बढ़कर 77 प्रतिशत हो गयी। ग्रामीण पुरुष श्रमिकों के मामले में ठीक इसके उलट तस्वीर उभरकर सामने आती है। 2017-18 में 55 प्रतिशत ग्रामीण पुरुष श्रमिक कृषि कार्यों में संलग्न थे, 2023-24 में उनकी संख्या घटकर 49 प्रतिशत हो गयी। ग्रामीण क्षेत्रों में पुरुष की तुलना में महिलाएँ अधिकाधिक संख्या में खेती के कामों में संलग्न हो रही हैं।

चित्र 1: ग्रामीण भारत में लिंग के अनुसार कुल श्रमिकों में कृषि में अपने परिवार के खेतों में ही काम करने वाले तथा गैर-कृषि श्रमिकों (नियमित/वेतनभोगी तथा आकस्मिक मज़दूर) का प्रतिशत (15 वर्ष और उससे ज्यादा उम्र के लोगों के लिए सामान्य स्थिति (पीएस+एसएस) में)

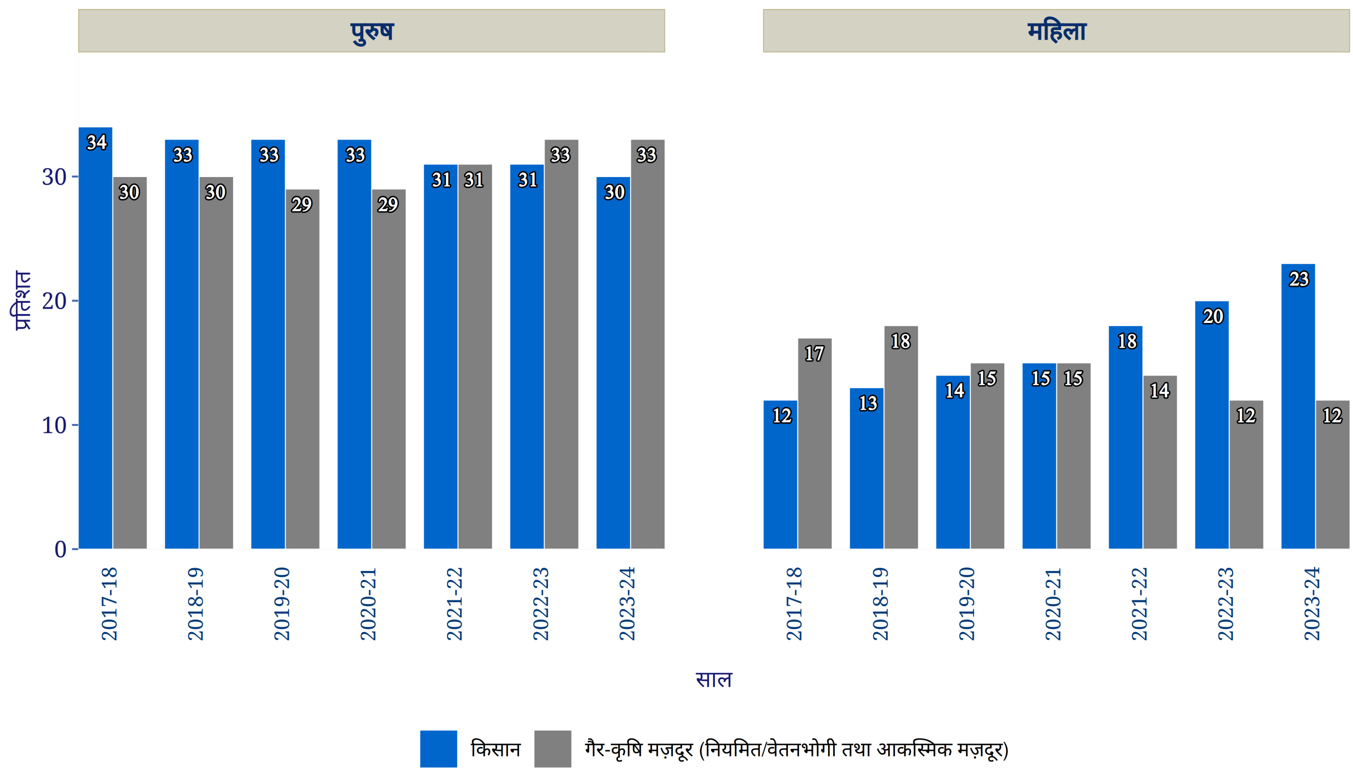

आँकड़ों का स्त्रोत : वार्षिक आवधिक श्रमबल सर्वेक्षण (पीएलफ़एस), सांख्यिकी और कार्यान्वयन मंत्रालय, भारत सरकार।

चित्र 1 ग्रामीण क्षेत्र में गैर-कृषि श्रमिकों (नियमित/वेतनभोगी तथा आकस्मिक मज़दूर) तथा कृषि में अपने परिवार के खेतों में ही काम करने वाले स्व-नियोजित श्रमिकों (किसान) का सालाना प्रतिशत दर्शाता है। यह चित्र साफ़ तौर पर दिखाता है कि ग्रामीण पुरुषों में गैर-कृषि श्रमिकों का प्रतिशत बढ़ रहा है जबकि अपने परिवार के खेतों में ही काम करने वाले किसानों का प्रतिशत घट रहा है। ग्रामीण महिलाओं में यह प्रक्रिया विपरीत रुख अख्तियार कर रही है है, लेकिन ग्रामीण पुरुषों की तुलना में कहीं ज्यादा तेज़ी से। इसका मतलब यह है कि जिस गति से ग्रामीण पुरुष कृषि से गैर-कृषि वेतनभोगी कार्यों की तरफ मुड़ रहे हैं उससे कहीं ज्यादा तेजी से ग्रामीण महिलाएँ खेती के कामों में संलग्न हो रही हैं।

2023-24 में ग्रामीण महिला श्रमिकों में सिर्फ 12 प्रतिशत महिलाएँ द्वितीयक तथा 11 प्रतिशत महिलाएँ तृतीयक

सेक्टर में काम कर रही थीं। शेष महिलाएँ प्राथमिक सेक्टर में कार्यरत थीं। 2017-18 से 2023-24 के दौरान द्वितीयक तथा तृतीयक सेक्टरों में काम करने वाली महिला श्रमिकों का प्रतिशत घटा है। इसके ठीक उलट, ग्रामीण पुरुष श्रमिकों का प्रतिभाग प्राथमिक सेक्टर में घट रहा है तथा द्वितीयक तथा तृतीयक सेक्टरों में बढ़ रहा है। छोटी जोतों वाले किसान परिवारों की प्रधानता वाले देश में समय के साथ पारिश्रामिक प्रदान करने वाले श्रम की माँग कम ही होती है, खासकर मशीनीकरण तथा खरपतवार नाशक रसायनों के बढ़ते प्रयोग के साथ। लेकिन, दोनों ही मामलों में एक अहम फ़र्क यह है कि महिलाओं के मामले में पारिश्रामिक पाने वाले श्रमिकों का प्रतिशत पुरुषों की तुलना में ज्यादा गिरा है। इसका मुख्य कारण है कि कृषि में कार्यरत महिलाओं में करीब आधी महिलाएँ अपने परिवार के खेतों में बिना पारिश्रामिक के सहायक के रूप में काम करती हैं। इनका प्रतिशत 2017-18 से 2023-24 के दौरान मामूली रूप से बढ़ा है। अपने खेतों में स्वनियोजित महिलाओं (सिर्फ परिवार के व्यक्तियों के साथ अपनी खेत में काम करने वाली किसान) का प्रतिशत इस दौरान 16 से बढ़कर 29 प्रतिशत हो गया है। सिर्फ अपने परिवार के व्यक्तियों के साथ खेती में किसानों के रूप में काम करने वाले पुरुष किसानों मामूली रूप से घटकर 59 से 57 प्रतिशत हुआ है जबकि अपने परिवार के खेतों में बिना पारिश्रामिक के काम करने वाले पुरुष श्रमिकों का प्रतिशत बढ़कर 16 से 22 प्रतिशत हुआ है।

कृषि कार्यों में संलग्न तथा बिना पारिश्रामिक के काम करने वाली महिला श्रमिकों का प्रतिशत बढ़ रहा है

चित्र 2 ग्रामीण भारत में पारिश्रामिक पाने वाले महिला तथा पुरुष श्रमिकों की सेक्टरवार तस्वीर पेश करता है। खेती में महिला तथा पुरुष, दोनों ही श्रमिकों में पारिश्रामिक पाने वाले श्रमिकों का प्रतिशत घट रहा है। महिलाओं में यह गिरावट पुरुषों की तुलना में ज्यादा है क्योंकि स्वनियोजित महिला किसानों तथा बिना पारिश्रामिक अपने खेतों में काम करने वाले महिला सहायकों का प्रतिशत अपेक्षाकृत ज्यादा बढ़ा है। द्वितीयक तथा तृतीयक सेक्टरों में, जहाँ पारिश्रामिक पाने वाले पुरुष श्रमिकों का प्रतिशत मामूली मात्रा में घटा है, वहीं, पारिश्रामिक पाने वाली महिला श्रमिकों का प्रतिशत बड़ी मात्रा में गिरा है।

चित्र 2: ग्रामीण भारत में तीनों सेक्टरों में संलग्न महिला तथा पुरुष श्रमिकों में पारिश्रामिक पाने वाले श्रमिकों (नियमित/वेतनभोगी तथा आकस्मिक मज़दूर) का प्रतिशत (15 वर्ष और उससे ज्यादा उम्र के लोगों के लिए सामान्य स्थिति (पीएस+एसएस) में)

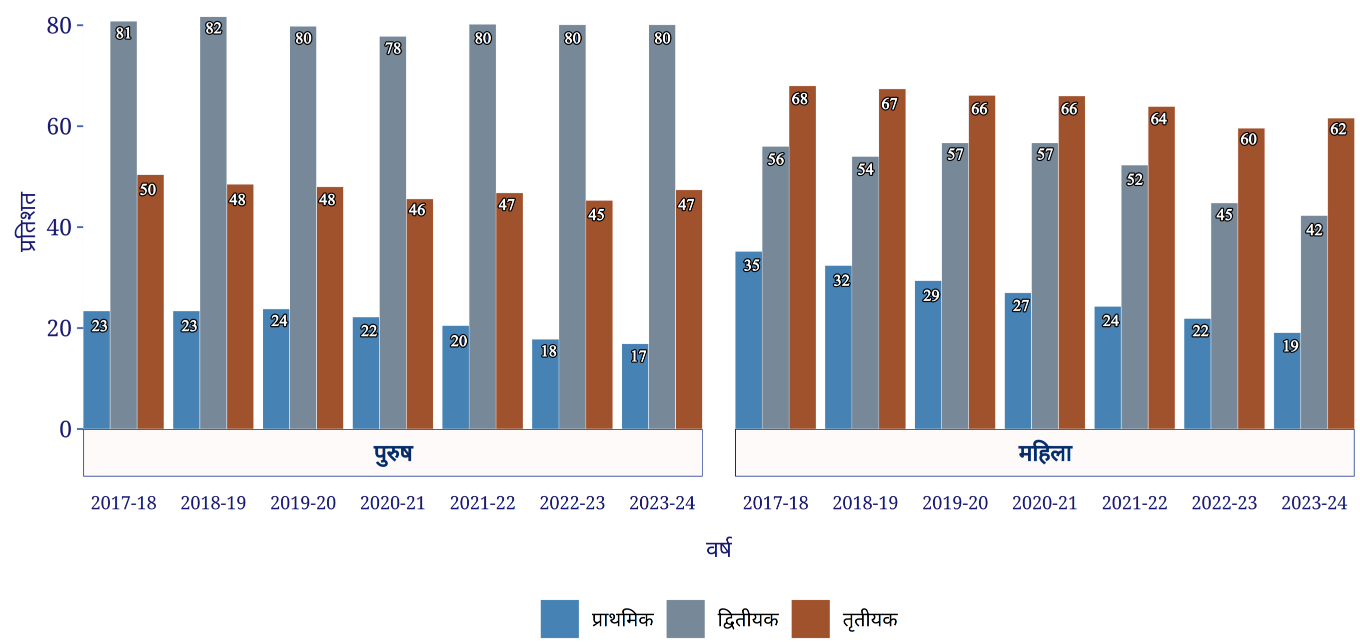

आँकड़ों का स्त्रोत: वार्षिक आवधिक श्रमबल सर्वेक्षण (पीएलफ़एस), सांख्यिकी और कार्यान्वयन

मंत्रालय, भारत सरकार।

उपरोक्त आँकड़े तथा उनका विश्लेषण दर्शाते हैं कि ग्रामीण क्षेत्रों में श्रमिकों की बढ़ती संख्या के मुख्यत: दो पहलू संकट तथा सरकारी उदासीनता की मार झेल रहे ग्रामीण भारत के दीर्घकालिक संकट को उजागर करते हैं:

1. श्रमिकों की बढ़ती संख्या, खासकर महिलाओं की, कृषि कार्यों में संलग्न हो रही है। गैर-कृषि सेक्टर बढ़ती जनसंख्या के अनुपात में आवश्यक रोज़गार का सृजन नहीं कर रहे हैं। अर्थव्यवस्था के सकल मूल्य वर्धन में कम होते हिस्से के साथ-साथ रोज़गार के मामले में बढ़ती हिस्सेदारी इस बात का द्योतक है कि खेती में बढ़ती श्रमिकों की हिस्सेदारी ग्रामीण भारत में गहराते आर्थिक संकट की वजह से है। कृषि में प्रछन्न बेरोज़गारी की समस्या विकराल रूप लेती जा रही है।

2. कृषि सेक्टर में महिलाओं का बढ़ता प्रतिभाग तथा पारिश्रामिक नहीं पाने वाली महिला श्रमिकों का बढ़ता अनुपात ग्रामीण क्षेत्र में मेहनताना देने वाले रोज़गारों की कमी की ओर इशारा करते हैं। गैर-कृषि सेक्टरों में पारिश्रामिक प्रदान करने वाले रोगज़ारों की कमी की वजह से एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसमें समाज में व्याप्त पितृसत्ता तथा लिंग भेद के परिणामस्वरुप पुरुष घर से बाहर पारिश्रामिक वाले रोज़गार कर रहे हैं तथा महिलाओं को खेती का काम करना पड़ रहा है। रोज़गार विहीन विकास तथा आर्थिक संकट ग्रामीण क्षेत्रों में लिंग के आधार पर काम के विभाजन को जन्म दे रहे हैं। महिलाएँ अधिकाधिक रूप से खेती के तथा अवैतनिक काम कर रही हैं जबकि पुरुष गैर-कृषि सेक्टरों में पारिश्रामिक प्रदान करने वाले रोज़गारों में संलग्न हो रहे हैं।

अखबारों, मीडिया चैनलों तथा सोशल मीडिया पर ऊँची जीडीपी संवृद्धि दर तथा अर्थव्यवस्था के बढ़ते आकार को लेकर गर्वपूर्ण बातें होती रहती हैं। सरकार द्वारा भी तथा पत्रकारों के द्वारा भी। हालाँकि इस हो-हल्ले में करोड़ों लोगों की ज़िंदगियों को प्रभावित करने वाले रोज़गार के अभाव तथा खेती के घाटे का सौदा बनने की खबरें नदारद रहती हैं। 2018-19 से 2023-24 के दौरान, कोरोना के वित्तीय वर्ष को छोड़कर, वास्तविक जीडीपी की औसत सालाना संवृद्धि दर सात प्रतिशत रही है। इसी दौरान, वर्कफ़ोर्स की औसत सालाना संवृद्धि दर पाँच प्रतिशत रही है। जिस रफ़्तार से जीडीपी बढ़ रही है उस रफ़्तार से श्रमिकों की संख्या नहीं बढ़ रही है। रोज़गार प्रत्यास्थता (Employment Elasticity) बताता कि जीडीपी में एक प्रतिशत संवृद्धि की वजह रोज़गार में कितने प्रतिशत की संवृद्धि हुई। 2018-19 से 2023-24 के दौरान, कोरोना के वित्तीय वर्ष को छोड़कर, रोज़गार प्रत्यास्थता सिर्फ़ 0.84 थी। पहले से ही व्याप्त बेरोज़गारी, खासकर ऊँची युवा बेरोज़गारी दर का सामना कर रहे तथा प्रछन्न बेरोज़गारी से जूझ रहे देश के लिए यह रोज़गार प्रत्यास्थता बेहद कम है। हर वर्ष श्रमबल में शामिल होने वाले करोड़ों शिक्षित युवाओं को रोज़गार के उचित अवसर प्रदान करने के लिए यह आवश्यकता से काफ़ी कम है।

उच्च संवृद्धि दर के साये में विकराल रूप अख़्तियार कर रहा है रोज़गार का अभाव

2018-19 से 2023-24 के रोज़गार प्रत्यास्थता का सेक्टरवार विश्लेषण एक असंतुलित विकास पथ की तस्वीर पेश करता है। इस दौरान प्राथमिक सेक्टर की रोज़गार प्रत्यास्थता 1.73, द्वितीयक सेक्टर की 0.95 तथा तृतीयक सेक्टर की 0.80 थी। रोज़गार सृजन के अभाव की गंभीरता का असली अंदाज़ा रोज़गार प्रत्यास्थता को सकल मूल्य वर्धन के सेक्टरवार बँटवारे को आलोक में देखकर लगाया जा सकता है। 2023-24 के आँकड़ों के अनुसार, प्राथमिक सेक्टर का सकल मूल्य वर्धन में हिस्सा 17 प्रतिशत, द्वितीयक सेक्टर का 29 तथा तृतीयक सेक्टर का 55 प्रतिशत था। जिन सेक्टरों का अर्थव्यवस्था में हिस्सा साल-दर-साल बढ़ रहा है जो अपनी संवृद्धि दर के मुकाबले सबसे कम रोज़गार का सृजन कर रहे हैं।

ऐसे में कृषि में बढ़ती श्रमिकों की संख्या तथा गैर-कृषि सेक्टरों में रोज़गार के अभाव को किस रूप में देखा जाए? बढ़ते वर्कफ़ोर्स के बावजूद, इसे किसी भी सूरत में वांछनीय परिघटना के तौर पर नहीं देखा जा सकता। वांछनीय परिघटना

होती गैर-कृषि सेक्टरों का समुचित मात्रा में ऊँची पगार वाले रोज़गारों का सृजन करके लोगों को कृषि से गैर-कृषि सेक्टरों में खींचना। हमारा उपरोक्त विश्लेषण दर्शाता है कि वर्तमान विकास-पथ की हकीकत इसके ठीक विपरीत है। रोज़गार की तलाश में लगे लोग मज़बूरीवश खेती में ही कार्यरत हो रहे हैं और प्रच्छन्न बेरोज़गारी की समस्या गंभीर होती जा रही है।

भारत सरकार के सांख्यिकी और कार्यान्वयन मंत्रालय द्वारा जारी किए जाने वाले वार्षिक आवधिक श्रमबल सर्वेक्षण (पीएलफ़एस) को सतही तौर पर देखकर ऐसा लग सकता है कि नए रोज़गारों का सृजन हो रहा है और भारत के विकास का पथ रोज़गारपरक है। खासकर ग्रामीण भारत में, जहाँ देश की कुल आबादी का तकरीबन दो-तिहाई हिस्सा **निवास** करता है। यह भारत जैसे कृषिप्रधान देश के संदर्भ में ज्यादा महत्वपूर्ण हो जाता है। भारत में खेती करने वाले करीब **90 प्रतिशत** परिवारों के पास 2 हेक्टेयर से कम की जोत है। छोटी जोत की खेती ना तो पूरे परिवार की ज़रूरतों को पूरा कर सकती है और ना ही पूरे परिवार के सदस्यों को समुचित रोज़गार प्रदान कर सकती है। इसके साथ-ही-साथ बाज़ार में पैदावार की कम कीमत तथा बढ़ती लागत खेती को घाटे का सौदा बनाते जा रही है। परिवार की ज़रूरतों की तुलना में नाकाफ़ी होती खेती से आमदनी की सूरत में गैर-कृषि सेक्टरों में मौजूद रोज़गार के अवसर महत्वपूर्ण बन जाते हैं। उनके अभाव में ग्रामीण परिवारों के सामने अपनी आमदनी बढ़ाने का कोई जरिया नहीं बचता।

लेकिन, इन आँकड़ों का सूक्ष्म अवलोकन इस सतह के नीचे छुपे संकट के स्वरूप को प्रकाश में लाता है। ये संकट सिर्फ खेती-किसानी के ही संकट नहीं हैं, अपितु पूरे ग्रामीण भारत की करोड़ों ज़िंदगियों को दैनिक रूप से प्रभावित करने वाले दिन-प्रतिदिन गहरे होते संकट हैं। ऐसे ही संकटों से पीड़ित किसान 2020 में लामबंद होकर देश की राजधानी को घेरकर करीब एक साल तक आंदोलनरत रहे। इस आंदोलन ने पूरी दुनिया का ध्यान भारत के कृषि-संकट की तरफ आकृष्ट किया। इस आंदोलन के उद्भव की कहानी तथा कृषि-संकट का ऐतिहासिक पहलू जानने के लिए आप ट्राईकॉन्टीनेंटल: सामाजिक शोध संस्थान द्वारा प्रकाशित डोसियर *???? ??? ????? ????????* को पढ़ सकते हैं। खेती को घाटे का सौदा बनने से बचाने के लिए तथा वाज़िब कीमत की माँग जैसे मुद्दों को लेकर आए दिन किसान आंदोलन करते हैं। इस तरह के आंदोलन आर्थिक संकट तथा बेरोज़गारी से जूझ रहे ग्रामीण इलाकों के पीड़ा की ही अभिव्यक्ति हैं।

– **उमेश यादव**

लेखक ट्राईकॉन्टिनेंटल : सामाजिक शोध संस्थान में रिसर्चर हैं।